सर्वप्रथम कर्त्तव्य क्या है - समर्पण क्या है?

आप कोई काम अपनी इच्छा से करते हैं और उससे अपनी वह इच्छा पूरी करते हैं वहआपको अच्छा लगता है. यह संस्कार कमाना है. जब आपने सब कुछ ईश्वर के सुपुर्द कर दिया, आप ईश्वर के आसरे बैठे हैं. जो कुछ हो रहा है ठीक हो रहा है, जो होगा वह भी ठीक होगा. यह समर्पण हो गया. तो जब समर्पण हो गया और आप अपनी किसी इच्छा से काम करते ही नहीं, तो संस्कार कहाँ से बनेंगे? अगर आप अपने को कर्ता समझते हैं और प्रयत्न भी कर रहे हैं तो आप कर्ता तो बन ही गए, चाहे वह काम होने का हो या न हो. जब आप कर्ता हैं और उसके लिए पुरुषार्थ भी कर रहे हैं तो उसका फल मिलेगा ही. इस तरह आगे का कर्म बना.

" सुपुर्दो मतों माओ खेशरा,

तू जाने हिफाज़त कमो वेशरा. "

भावार्थ : मैंने तो अपने आपको पूर्ण रूप से ईश्वर के सुपुर्द कर दिया. अब वह चाहे कम दे या ज़्यादा दे, वह ज़ुम्मेदार है. मैं कुछ नहीं चाहता.

श्रीकृष्ण बराबर समझाते चले गए हैं. सब तरह के तरीके बताये, सब प्रकार के योग बतलाये. अष्टांग योग, वेदांत, संन्यास आदि. सब समझाते चले गए. सबसे अन्त में भगवान कहते हैं - " ऐ अर्जुन! अगर तू यह भी नहीं कर सकता, वह भी नहीं कर सकता तो तू मेरा सच्चा दोस्त है, मैं तुझे एक राज़ की बात बताता हूँ. तू सब कर्मों को छोड़कर मेरी शरण मैं आ जा. " सर्व कर्माणि परित्यज्य माम शरण व्रज , यानी मेरी शरणागत हो जा. मैं तुझे यकीन दिलाता हूँ कि मैं तुझे भवसागर से पार कर दूंगा. कृष्ण कौन है - ईश्वर और अर्जुन कौन है - जिज्ञासु जो अभ्यासी है.

इसे समझिये कि हमारा सबसे मुख्य कर्तव्य क्या है? इस समय आप अपना कर्तव्य क्या समझ रहे हैं ? दुनिया में तरक्की करना, या कर्त्तव्य यह समझ रहे हैं कि अपने परिवार, बाल बच्चों का पालन पोषण करना, लड़के की शादी करना या कोई और सांसारिक कर्तव्य. ये कर्तव्य तो हैं, मगर ये किसके कर्त्तव्य हैं ? ये आपकी स्थूल देह ही से तो ताल्लुक़ रखते हैं. कल को यदि यह देह ही नहीं रही तो ये कर्तव्य कैसे पूरे होंगे? लेकिन हमारी आत्मा, जो हमें सच्चा आनंद देने वाली है, वह तो हज़ारों बरस से मन के चंगुल में फंसी है. उसकी तरफ क्या हमारा कोई कर्तव्य नहीं है? अपने किसी साधारण मित्र के लिए कोई काम कर देना तो हम

अपना कर्तव्य समझते हैं लेकिन अपनी चिरकाल से बन्धन में फंसी हुई आत्मा को मुक्त करने के लिए हमें जो यह मनुष्य शरीर मिला है, भविष्य में फिर यह शरीर मिले या न मिले, उसके लिए हमारा क्या कोई फ़र्ज़ नहीं है?

हमारे मन में जो दुनियाँ की इच्छाएं उठती हैं उन्हें पूरा करना हम अपनी ड्यूटी समझते हैं. मान लीजिये कि आपके मन में यह ख्याल आता है कि हमारा बेटा नाराज़ है, लाओ उसे खुश कर लें. लेकिन ये कितने दिनों के लिए? क्या वह हमेशा खुश रहेगा? अगर वह नाराज़ है तो, और खुश है तो, दोनों हालातों में भी,आपका सर्वप्रथम कर्तव्य यह है कि आपकी आत्मा जो मन की दुनियाँ में फंस गयी है,उसको आज़ाद करायें. इस काम के लिए कितना जीवन शेष है? इसका किसी को क्या पता? किसी को भी अपनी मौत का पता नहीं है, न जाने कब आजाये. आदमी यह सोचता है कि दुनियाँ की और सब ड्यूटी तो उसकी हैं लेकिन अपनी आत्मा को मन के चंगुल से आज़ाद कराने की ड्यूटी उसकी नहीं है.

कृष्ण भगवान कहते हैं कि अपनी आत्मा को मेरे समर्पण कर दो यानी सर्वप्रथम कर्तव्य वह यही बताते हैं कि अपने आप को पूरी तरह उनको समर्पित कर दो और तुम्हारे सारे काम वे पूरा कर देंगे. हम बीसियों बार गीता पढ़ते हैं लेकिन अपने मन केमुताबिक़ उसका ऐसा मतलब निकल लेते हैं जिससे दुनियाँ के मोह और माया में फंसते रहते हैं.

आपका सर्वप्रथम कर्तव्य यह है कि ईश्वरको याद करो और दुनियां के जितने और कर्तव्य हैं उन्हें गौण समझो और जब तुम उन सबको पूर्ण कर जाओ तो अपनी इस ड्यूटी को भी छोड़ कर अलहदा हो जाओ - सम्पूर्ण समर्पण. समर्पण का मतलब यह है कि तुम्हारी अपनी कोई इच्छा शेष न रहे. अपने को कर्ता न समझो, द्रष्टा समझो. समझ लो कि यह दुनिया एक सिनेमा हो रहा है. शिव भगवान शक्ति के साथ ताण्डव नृत्य कर रहे हैं, खेल हो रहा है. उसको देखो और जो पार्ट (अभिनय करने को) तुम्हें दिया गया है उसको अदा करो. तुम दूसरे के पार्ट में क्यों दखल देते हो. यह तो प्रक्रति माँ खेल खेल रही है. यह दुनिया किसकी है? क्या तुमने यह दुनिया बनाई है? क्या तुम यहाँ अपनी मर्ज़ी से आये हो ?

लाये हयात, कज़ा ले चली ,

अपनी ख़ुशी न आये, न अपनी ख़ुशी चले.

हमें तो एक पार्ट अदा करने के लिए इस दुनियां में भेजा गया और माँ अपना खेल खेल रही है. तुम अपना पार्ट अदा करते रहो. ईश्वर का ध्यान रखो, और शिव भगवान का जो खेल हो रहा है उसे देखते चलो. याद रखो, आदमी को ईश्वर ने फांसा है यहाँ जन्म देकर और ईश्वर ही उसे निकालेगा. लेकिन फंसते हम खुद हैं क्योकि हम अपनी इच्छाएं पैदा करते हैं. जिस हालत में उस ईश्वर ने हमें रखा है, उसी हालत में हमें खुश रहना चाहिए - यही दीनता है.

अगर आपके मन में कोई इच्छा उठती है और उसे पूरी करना चाहते हो तो उस ईश्वर का आसरा लेकर पूरी करो और यदि वोह इच्छा पूरी न हो तो भी खुश रहो. यह भी समर्पण में आजाता है. अपनी इच्छाएं उठाना और अपने आप को कर्ता समझना - यह समर्पण कहाँ है? जहाँ समर्पण है वहां कर्म कहाँ? जहाँ कर्म नहीं वहां बदला कहाँ है? कर्म कहाँ पैदा होता है - इच्छाओं से. जब किसी वस्तु की इच्छा होती है तो हम कर्म करते हैं और जब वह वस्तु हमें हमें प्राप्त हो जाती है तो उसे हम अपना समझने लगते हैं और जब वह प्राप्त नहीं होती तो हम दुखी होते हैं. प्राप्ति हो जाने पर भी हम यह ख्याल करते रहते हैं कि न जाने कब यह चीज़ हमसे छूट जाएगी. यानी हर हालत में उसी का ख्याल रहता है. उस वस्तु से मोह हो जाता है और हम उसमें फंस जाते हैं.

अगर इच्छा न उठे और किसी वस्तु की प्राप्ति आपको हो जाय तो यह समझो कि यह वस्तु मेरी नहीं है, भगवान जब चाहेगा इसे वापस ले लेगा. तो लगाव या मोह कहां हुआ? इस तरह से रहो - दुनिया उसकी (ईश्वर की) समझो - उसको दृष्टा बनकर देखते रहो. हर चीज़ उसकी है, तुम भी उसके हो, तुम्हारा शरीर भी उसीका है. तुमको जो पार्ट अदा करने के लिए दिया गया है, अपनी शुद्ध बुद्धि और सच्चे दिल से उसको अदा करते रहो. क्या होगा? मैं क्या जानूं? क्या किसी चीज़ का फल तुम्हारे काबू मैं है? तुम कर सकते हो काम को, सो किये जाओ. नतीजा तो वह जाने क्या होगा? सब उस पर छोड़ दो. यह समर्पण है.

जहाँ समर्पण है, वहां इच्छा नहीं होती. जहाँ इच्छा नहीं, वहां कर्म नहीं. जहाँ कर्म नहीं, वहां आवागमन नहीं. जितने महापुरुष हुए हैं सबने यही कहा है कि अपनी कोई इच्छा मत रखो. बुद्ध भगवान ने भी यही कहा है कि इच्छाएं ही सब बंधन की जड़ हैं. जो इच्छाओं को जीत गया, वही मन को जीत जाता है. जिसने इसको जीत लिया, उसने दुनियां को जीत लिया, उसका आवागमन ख़त्म हो गया. इसी का नाम मोक्ष है. मोक्ष का मतलब है, मुक्त हो जाना. काहे से? सारी इच्छाओं से. इसके बाद आनन्द ही आनन्द है. उसके बाद है हमेशा-हमेशा के लिए उसमें लय हो जाना. मोक्ष का मतलब ईश्वर में लय हो जाना है. पर इसके लिए पहले इच्छाओं से आज़ाद होजाना होगा. मेरे गुरुदेव (पूज्य लाला जी महाराज) ने एक बार कहा था कि मैंने इस शख्स को (मुझे)

मोक्ष दे दी. हमें इस बात का ख्याल भी नहीं था. हमें हमारे एक गुरुभाई ने बताया कि यह बात उन्होंने अपने रजिस्टर में दर्ज़ कर रखी हैं.

परमात्मा से कुछ मत मांगो. मांगो तो उसका प्रेम मांगो. हालाँकि यह भीनहीं माँगना चाहिए. हरि इच्छा हो, जो आपकी मर्ज़ी हो, वोही हो. सबसे ऊंची प्रार्थना यही है. "हे प्रभु! आपकी इच्छा पूर्ण हो." अगर आप मुझको नर्क में रखना चाहते हो तो बहुत अच्छा, केवल आपकी याद बनी रहे. मुझे न दीन चाहिए, न दुनियाँ. अगर कोई इच्छा हो भी तो यह हो कि तुम्हारा (परमात्मा का) प्यार बना रहे, तुम्हारी याद बनी रहे. इस दुनियाँ का क्या माँगना? यह तो तबाह (नष्ट) होनी ही है. हम मांगें कि हमें एक लाख रुपया मिल जाएँ - मिल भी गया और कल को मौत हो गयी तो भी उसको भोगने के लिए भी दुबारा आना पड़ेगा. तो ऐसी चीज़ मांगें जो हमेशा हमारे साथ रहे, मरने पर भी हमारे साथ रहे - यानी ईश्वर प्रेम ही मांगें. ईश्वर से सिवाय उसके प्रेम के और कुछ मत मांगो, वो दे या न दे. अगर सच्चे दिल से तुम उसका प्यार मांगते हो तो वोह तुमको देगा और इससे तुम्हारा इतना भला होगा कि तुमको ख्याल भी नहीं है.

हर व्यक्ति अपने-अपने मत का प्रचार करता है लेकिन जिस तरीके को आपने अपनाया है उसी को पकडे रहो जब तक कि आपको आत्मा का असली ज्ञान न हो जाए. इसके बाद तुम्हें अख्तियार है कि चाहे खामोश होकर बैठ जाओ और चाहे तो और तरक़्क़ी करके देख लो.

जैसा भाव - वैसा लाभ

जो भाव संसारी चित्त में बसा हुआ है जिसकी कार्यवाही के लिए साधक का मन धन-दौलत की फ़िकर में लगा हुआ है, वोह मौजूद रहे और परमार्थ भी बन सके, यह नामुमकिन है. संसारी भय, भाव और चिन्ता मन से निकल देनी होगी. संसार उजाड़ देना होगा. बाहर की कार्यवाही बंद कर देने से या सब छोड़ देने से मतलब नहीं है बल्कि अन्तर में, दिल में, जो भय, भाव और चिन्ता संसार की भरी हुई है, उसको दूर कर देना होगा. अन्तर में जिस कदर संसार का भय, भाव और चिन्ता भरी हुई है उसका ज़रा सा ही असर बाहर में आता है, बाकी अन्तर में अम्बार का अम्बार भरा पड़ा है जिसकी इस वक्त खबर भी नहीं है. जिस कदर उसको दिल से निकाला जायेगा तब ईश्वर का प्रेम पैदा होगा और तब ही मालिक की नूरानी शक्ल (ज्योतिर्मय रूप) के दर्शन होंगे.

इसलिए हर साधक को चाहिए की प्रभु प्रेमकी वाज़ी में संसार को दाँव पर लगा दे और हाथ झाड़ कर उठने को तैयार हो जाये. जब सब कुछ झाड़ देगा तभी सब मिलेगा. यानी संसार और संसार की वस्तुएं और उनके लिए

जो भय, भाव और चिन्ता दिल में बसी हुई है उसको हाथ झाड़ कर छोड़ देगा और हार जाएगा तब मालिक के प्रेम की दौलत और धन जो की एक अपार भंडार है, ज़रूर मिलेगा . मालिक की साथ प्रेम का ऐसा नाता जोड़े जो मालिक ही मिल जाए . वह भक्त जिसने मालिक की प्रेम की बाज़ी पर संसार को लगा दिया है वही ईश्वर की ज्योति की जगमगाहट क़े दर्शन यानी मालिक के नूरानी रूप के दर्शन प्राप्त कर सकेगा.

ज़ाहिरी तौर पर (प्रकट रूप में) दुनियां के त्याग से कुछ हांसिल नहीं होगा, जब तक कि संसार का रस दुनियां में और साधक के भाव में मौजूद है. मालिक के चरणों में पहुँचने के लिए तो अनुराग सहित वैराग्य होना चाहिए - यानी मालिक से अनुराग और दुनियां से वैराग्य बढे. जब संसार के झटके खायेगा, उनसे दुखी होकर और कोई रास्ता न पायेगा, तब चित्त संसार से उदास होगा और उपरामता प्राप्त होगी. तभी इस बात की चाह पैदा होगी कि इस बात की तलाश करें कि सच्चा सुख कहाँ है और उसके पाने के क्या साधन हैं? गुरु को जिस भाव से देखोगे वैसा है लाभ होगा. मनुष्य समझोगे तो मनुष्य का सा लाभ होगा. अगर ईश्वर समझोगे तो ईश्वर का सा लाभ होगा .

ईश्वर तुम्हारा कल्याण करें .

राम सन्देश -नवंबर १९९४